E-ISSN: 2583-9667
Indexed Journal
Peer Reviewed Journal
https://multiresearchjournal.theviews.in

Received: 18-04-2024
Accepted: 28-05-2024

INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCE RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY

Volume 2; Issue 3; 2024; Page No. 512-516

कबीर की रचनाओं में स्त्री चेतन के प्रति समाज व्यवस्ता और विचारधारा का अध्ययन

[1]अनामिका सक्सेना, [2]डॉ. अमन अहमद

[1]रिसर्च स्कॉलर, मोनाड विश्वविद्यालय, हापुड़, उत्तर प्रदेश, भारत
[1]सहायक प्रोफेसर, मोनाड विश्वविद्यालय, हापुड़, उत्तर प्रदेश, भारत

Corresponding Author: अनामिका सक्सेना

सारांश

ऐसे तर्कसंगत विचारों वाले व्यक्ति के लिए, अजीब बात यह है कि महिला का विचार सभी बीमारियों को परिभाषित करने के लिए एक रूपक के रूप में कार्य करता है। सामंती उत्पीड़न और ब्राह्मण उत्पीड़न दोनों में महिलाओं का शोषण अत्यंत स्वाभाविक देखा गया। दीन–दुखियों और बहिष्कृतों के प्रति असहमति की आवाज उठाने वाले कबीर में भी यही भाव कायम रहा। सभी बुराइयों और पापों का बोझ महिलाओं पर डाल दिया गया, जिन पर कबीर द्वारा किए गए सामाजिक सुधार के कार्य की ओर ध्यान नहीं गया। वे जाति से बहिष्कृत लोगों की जगह पर काबिज़ रहे। वह उस ब्राह्मण की आलोचना करते हैं, जिसे किसी महिला द्वारा परोसा गया भोजन खाने में कोई आपत्ति नहीं है, जो जन्म से शूद्र है, लेकिन शूद्र को छूने में आपत्ति करता है। कबीर में, कोई भी ऐसी धारणाओं का एक सेट पढ़ सकता है जो बताती है कि महिलाओं से समाज में किस तरह के व्यवहार की अपेक्षा की जाती है। महिलाओं को दी गई पारंपरिक सीमाएं और स्थान पूरे दिल से स्वीकार किए जाते हैं। महिलाओं का वर्गीकरण दो श्रेणियों में किया गया है, अच्छी महिलाएं और बुरी महिलाएं। जो अपने पति के प्रति वफादार थीं और परिवार के सदस्यों, यानी पति के माता–पिता, भाई और बहनों के प्रति समर्पित थीं, वे पहली श्रेणी में आती थीं। उन्होंने सतीत्व (पतिव्रत) की अवधारणा का पुरजोर समर्थन किया। वे कहते हैं, कोई स्त्री चाहे कुरूप हो, अपवित्र हो, काली हो या बुरी हो, यदि वह पतिव्रता है तो उसे कोई दोष नहीं छूएगा। महिलाओं की सार्वजनिक जीवन में कोई भागीदारी नहीं थी और उन्हें पर्दे के पीछे, घर के अंदर ही रहना पड़ता था।

मूल शब्दः महिलाओं, माता–पिता, जाति, स्त्री, ब्राह्मण, शूद्र

1. प्रस्तावना

निर्गुण भक्ति परंपरा के महान उत्तर भारतीय संत कवि कबीर ने अपने छंदों और गीतों की रचना मौखिक रूप से की। 15181 में उनकी मृत्यु के बाद, उनके छंद और गीत लगभग एक शताब्दी तक मौखिक परंपरा में बने रहे, इससे पहले कि उन्हें पहली बार सिखों के आदि ग्रंथ गुरु ग्रंथ साहिब (1604) और पंचवनी (1614) जैसी प्रमुख पांडुलिपियों में लिखा या एकत्र किया गया था। दादूपंथ. इन पांडुलिपियों में कुछ छंदों को प्रक्षेप माना जाता है। हालाँकि, यह निर्धारित करना कठिन है कि कौन से पद कबीर के हैं और कौन से प्रक्षेप हैं। पांडुलिपियों में कुछ छंद महिलाओं के प्रति कबीर के स्त्री–द्वेषी रवैये को दर्शाते हैं। इन छंदों में वह स्त्री को पुरुष की आध्यात्मिक उन्नति में बाधक मानते हैं। वह उसकी तुलना वासना के स्रोत से करता है जो संतत्व का सबसे शक्तिशाली शत्रु है। वह उसे एक बुरी शक्ति के रूप में चित्रित करता है। उसके लिए स्त्री पुरुष के जीवन में केवल दुख, परेशानी और विनाश लाती है।

वह पुरुष को स्त्री से दूर रहने की चेतावनी देता है। निम्नलिखित उनके कुछ अक्सर उद्धृत छंद हैं जो उनकी स्त्रीद्वेष को दर्शाते हैं:

नारी नासावे तीनी सुख, जा नर पनसे होइभगती, मुकाति निज ज्ञानमें, पैसा न सकाई कोई (स्त्री पुरुष के निकट आने पर उसके तीन गुणों को नष्ट कर देती है; भक्ति, मोक्ष और दिव्य ज्ञान उसकी आत्मा में प्रवेश नहीं करते हैं।) नारी कुंडा नरक का, बिड़ला थाम्बे बागकोई साधु जन उबरे, सब जग मूवन लाग (नारी नरक का गड्ढा है, दुर्लभ है वह व्यक्ति जो खुद पर लगाम लगाता है; केवल कुछ ही लोग बचा पाते हैं स्वयं; बाकी दुनिया इसके जाल में फंस जाती है और मर जाती है।)

पहले श्लोक में स्त्री को भक्ति, मोक्ष और दिव्य ज्ञान का नाश करने वाली के रूप में दर्शाया गया है। दूसरे में, कबीर ने स्त्री की तुलना "नरक के गड्ढे" से की है। कबीर की कविता की पांडुलिपियों में ऐसे कई अन्य पद हैं जिनमें उन्होंने स्त्री को "पैनी छुरी" (एक तेज चाकू), "काली नागिनी" (एक काला कोबरा), "माया" (भ्रम), "के साथ तुलना करके नकारात्मक रूप से चित्रित किया है। बिश की बेल'' (जहर की लताएं), ''मदन तालाबभारी'' (वासना का तालाब) आदि। ऐसे पद कबीर की स्त्री विरोधी छवि की पुष्टि करते हैं। कबीर के दोहों में नारी की निन्दा पर अनेक विद्वानों ने टिप्पणियाँ की हैं। डेविड लोरेंजेन (2011) बताते हैं कि "उनके कई गीत और छंद महिलाओं के प्रति शत्रुतापूर्ण दृष्टिकोण

व्यक्त करते हैं, हालांकि इन संदर्भों को माया और रोजमर्रा की जिंदगी की विकर्षणों के संदर्भ के रूप में मुख्य रूप से रूपक अर्थ में भी लिया जा सकता है"। पीटर गेफके लिखते हैं कि कबीर महिलाओं की निंदा करते हैं और उनकी कामुकता को संतत्व के प्रतिकूल पाते हैं। डेविड कुक को कबीर की कविता में भारी मात्रा में स्त्रीद्वेष दिखता है। निक्की–गुनिंदर कौर सिंह (1993) से पता चलता है कि "महिलाओं के बारे में कबीर की राय अपमानजनक और अपमानजनक है"। कैरिन शोमर और वेंडी ओ' फ्लेहर्टी भी उनकी कविता में स्त्री–द्वेषी पूर्वाग्रह पाते हैं। शोमर (1979) का कहना है कि "महिला को 'काली नागिनी' (एक काला नाग), 'कुंड नरक का' (नरक का गड्ढा), 'जुठानी जगत की' (दुनिया का कूड़ा) के रूप में जाना जाता है और उसे कुछ भी नहीं के रूप में देखा जाता है।" लेकिन आध्यात्मिक ज्ञान के लिए एक बाधा है" । हालाँकि, कबीर एकमात्र साधक (आध्यात्मिक साधक) या प्रारंभिक आधुनिक संत कवि नहीं हैं जो स्त्री को आध्यात्मिक प्राप्ति के लिए एक बाधा मानते हैं। पुरषोत्तम अग्रवाल (2009) बताते हैं: "यह नारी की निंदा करने का दृष्टिकोण केवल कबीर तक ही सीमित नहीं है। निर्गुण और सगुण दोनों परंपराओं के कई कवि स्त्री को नरक का द्वार बताते हैं"।

2. परिणाम एवं चर्चा

2.1 कबीर की सामाजिक चेतना

चेतना एक बहु–आयामी अवधारणा है जिसका कोई एक निश्चित अर्थ या परिभाषा नही हो सकती। चेतना संवेदनशीलता के एक विशेश गुण या लक्षण को कहते हैं जिसमें तंत्रिकीय क्रियाओं द्वारा एक निश्चित मात्रा में जटिलता प्राप्त कर लेना भी शामिल होता है। जॉन लाक ने चेतना शब्द का प्रयोग 'व्यक्ति के स्वयं में मस्तिष्क में जो कुछ होता है, उसके बोध के अर्थ में लिया जाता है।' इसके अलावा सामाजिक चेतना व्यक्तियों के बीच अपने आपसी संबंधों के प्रति जागरुकता का भाव सामाजिक चेतना को परिलक्षित करता है, अर्थात जब च्यक्ति समान अनुभवों में अपने को भागीदार समझते हैं, तब यह स्थिति सामाजिक चेतना को प्रकट करती है। किसी सामाजिक समस्या का समाधान करने के उद्धेश्य से उठाए गए कदम व्यक्तियों की सामाजिक चेतना के द्योतक है।

चेतना एक बहु–आयामी अवधारणा है जिसका कोई एक निश्चित अर्थ या परिभाषा नही हो सकती। चेतना संवेदनशीलता के एक विशेश गुण या लक्षण को कहते हैं जिसमें तंत्रिकीय क्रियाओं द्वारा एक निश्चित मात्रा में जटिलता प्राप्त कर लेना भी शामिल होता है। जॉन लॉक ने चेतना शब्द का प्रयोग 'व्यक्ति के स्वयं में मस्तिष्क में जो कुछ होता है, उसके बोध के अर्थ में लिया जाता है।' इसके अलावा सामाजिक चेतना व्यक्तियों के बीच अपने आपसी संबंधों के प्रति जागरुकता का भाव सामाजिक चेतना को परिलक्षित करता है, अर्थात जब च्यक्ति समान अनुभवों में अपने को भागीदार समझते हैं, तब यह स्थिति सामाजिक चेतना को प्रकट करती है। किसी सामाजिक समस्या का समाधान करने के उद्धेश्य से उठाए गए कदम व्यक्तियों की सामाजिक चेतना के द्योतक है।

पद्धहिंदू–मुस्लिम प्रेम– कबीरदास जी ने धर्म निरपेक्षता के नए आयाम समाज के समक्ष प्रस्तुत किये तथा अपनी वाणी में हिंदू–मुस्लिम प्रेम की एक सुदृढ आधारशिला रखी। उन्होनें धर्म की परिस्थितियों को भ्रम मात्र कह की उसे उदार रुप में ग्रहण करने का आग्रह किया था। उन्होनें प्रेम का संबंध ईश्वर से जोड कर मनुष्य मात्र को इस में मिला दिया था तथा ''कहै कबीर एक राम जपहु रै भाई, हिदू तुरक में भेद न कोई'' कह कर दोंनों के अभेद को स्पष्ट किया। उस समय हिंदू–मुस्लमानों के बीच जो संघर्ष था, कबीर ने सहिष्णुता लाने का अनुठा कार्य किया।

पपद्धवर्णाश्रम व्यवस्था का विरोध– कबीरदास जी हिन्दू धर्म ही वर्ण व्यवस्था जो कि बहुत ही विभेदपूर्ण थी का खंडन किया। उनके युग में अनेक धार्मिक सम्प्रदाय अपनी विषम परिस्थितियों में पाररूपरिक विरोध को लेकर प्रकट हो चुके थे। वे एक दूसरे को नीचा दिखाने में लीन थे। कबीर ने वर्णाश्रम के पीछे लोगों की मूर्खता और अज्ञानता को देखा। उन्होंने सभी उच्च वर्गो को दुत्कारा और समाज के तथाकथित निम्न वर्ग को उच्चता देने कर यत्न किया।

पपपद्धआडंबरों का विरोध – कबीर ने विभिन्न धर्मों के लोगो द्वारा किए जाने वाले आडंबरो का डटकर विरोध किया। इन्होनें साधु–योगियों के आचार को भी बुरा माना। इनके अनुसार केवल वेश–भूषा से परमात्मा की प्राप्ति नही होती।

फाड़ि पुटौला धजि करौ, कम लडी़ पहराउं।
जेही जेही भेशां हरि मिलै, सोइ सोइ भेश धराउं।
जो मुद्रा लगा कर लोगों को देखते हैं, वे अवधूत नहीं हैं बल्कि आंडबर रचाने वाले धोखेबाज़ है–
अवधि जोगी जगथैं न्यारा।
मुद्रा निरति सुरति करि सींगी, नादर वंडै धारा।।
मूर्ति पूजा, तीर्थ–व्रत आदि का इन्होंने खुलकर विरोध किया है।
पाहन पूजै हरि मिलै, तो मै पूजौं पहाड।
ताते चाकी भली, पीसी खाए संसार।।

पअद्ध नारी का स्वरुप – कबीर ने नारी जीवन के दो प्रकार के चित्र प्रस्तुत किये हैं– नारी निंदा और नारी प्रशंसा। वे मानते है कि नारी प्रभु को पाने के लिए साधना पथ की सबसे बडी बाधा है, वह दुर्गम घाटी है। उसका काम–मूलक रुप न केवल साधना में बाधक है बल्कि सामाजिक मर्यादाओं में भी अविघातक है–

नारी का झाईं परत अंधा होत भुजंग। कबिरा तिन की का गति, नित नारी के संग।। इन्होनें पवित्रता नारी की मुक्त कंठ से प्रशंसा की है। वह 'संत' और 'सूरमा' की कोटी में हैं– संत सती और सूरमा, इन पटतर कोउ नांहि। अगम पंथ को पग धरै, डिगै तो कंहा समाहिं।।

अद्धरीति–रिवाजों और प्रथाओं का चित्रण– कबीर ने सुधारवादी होने के कारण तरह–तरह के सामाजिक रिती–रिवाजों और प्रथाओं का चित्रण भी किया है व इन सब पर आध्यात्मिक आवरण डाल दिया है। इन्होनें कृषि, व्यापार, नौकरी, छोटे–बड़े कामों को रुपक के रुप में प्रस्तुत किया है। रुपया उधार लेने, ब्याज बढ़ने आदि को भी रुपकों में प्रस्तुत किया है–

मन रे कागद कीर पराया।
कहा भयौ ब्यौपार तुम्हारै, कलकतर बढ़ै सवाया।

अपद्धजाति–पाती का विरोध– कबीर ने भक्ति के मार्ग पर चलते हुए जातिगत भेदभाव का विरोध किया है। वह जात–पात, उंच–नीच आदि को स्वीकार नही करते। उनका मानना है–

जाति–पाति पूछे नहीं कोई।
हरि को भजे सो हरि का होई।।

अपपद्धअवतारवाद और बहुदेववाद का विरोध– कबीरदास ने निर्गुण भावना पर अपनी भक्ति भावना को आधारित कर अवतारवाद और अनेक देवी–देवताओं के प्रति विश्वास का विरोध किया। कहीं–कहीं तो उन का विरोध अति उग्र स्वर में भी है। वह ईश्वर के अद्वैतवादी रुप को ही मानते है और अवतार–भावना की आलोचना करते हैं। राम के अवतारी रुप के विशय में वह कहते हैं–

राम को पिता जसरथ कहिए, जसरथ कौन जाया।
जसरथ पिता राम कौ दादा कह्नौ कंहा ते आया।।

सामाजिक से हमारा तात्पर्य किसी देश एवं काल विशेष से संबंधित मानव समाज में अभिव्यक्त परिवर्तनशील जागृति से होता है। इसका उद्‌भव सामाजिक अन्याय, अनीति, दुराचार, शोषण की प्रक्रिया से होता है। इसके पीछे सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, राजनीतिक व सांस्कृतिक परिस्थितियाँ प्रेरक होती हैं। सामाजिक चेतना व्यक्तिमूलक और समाजमूलक दोनों रूपों में रहती है। साहित्य को सामाजिक परिवर्तन मानते हुए साहित्यकार व्यक्तिमूलक और समाजमूलक दोनों स्तरों पर सामाजिक चेतना का अनुसरण करता है। कबीर की सामाजिक चेतना के संदर्भ में पहली धारणा ये बनती है कि वे समाज सुधारक थे। वस्तुतः कबीर बाह्याडम्बर, मिथ्याचार एवं कर्मकांड के विरोधी थे, परन्तु सामाजिक मान्यताओं का विरोध करते समय वे सर्व–निषेधात्मक मुद्रा कभी नहीं अपनाते थे। कबीर अपने समय में प्रचलित हठयोग की साधना, वैष्णव मत, इस्लाम तथा अनेक प्रकार की साधना प(तियों से परिचित थे।

उन्होंने सबकी आलोचना की, किन्तु उनका सारतत्त्व समाहित किया। एक भक्त के रूप में उन्होंने शुष्क ज्ञान साधना से आगे ब द्विवेदी के अनुसार कबीर ने ऐसी बहुत सी बातें कही हैं, जिन्हें अगर उपयोग किया जाये तो समाज–सुधार में सहायता मिल सकती है, पर इसीलिए उनको समाज–सुधारक समझना गलती है। वस्तुतः वे व्यक्तिगत साधना के प्रचारक थे। कबीर एक आध्यात्मिक पुरूष थे। उनका सारा जीवन ईश्वर की उपासना में बीता था। भक्ति समझ लाती है, सहानुभूति लाती है और तब आप दूसरे धर्म, दूसरी विचारधारा का हिस्सा बनते हैं। इसके अतिरिक्त स्वयं उनके जैसा नहीं बन जाते वरन् उस धर्म या विचारधारा के प्रति एक समझ पैदा करते हैं। प्रेम, समर्पण, त्याग पर ही यह भक्ति सि(हो सकती है–

कबीर सौदा राम सौं, सिर बिन कदै न होय।
प्रेम भक्ति है–
कबीर निज अधर प्रेम का मारग अगम अगाध।
सीस उतारि पगतलि धरैए तब निकटि प्रेम का संवाद।।

एक और बात जो कबीर की सामाजिक चेतना के संदर्भ में महत्त्वर्पूण है, वह यह कि कबीर के अनुसार सारे धर्म अंततः एक हैं। उनके बीच विविधता या अलगाव की भावना के स्थान पर कबीर समन्वय स्थापित करने की बात कहतें हैं। समन्वय का अर्थ है कि हम मनुष्य की मूल एकता को स्वीकार करें और उस विशाल मानवतावादी दृष्टि को अपनाएँ, जो समग्र मनुष्य जाति को सामूहिक रूप से अनेक प्रकार की कुसंस्कार और अभावों के बंधन से मुक्त करके उसे जीवन की उच्चतर चरितार्थता की ओर ले जाने का प्रयास करती है। कबीर ने समस्त बाह्याचारों को छोड़कर साधारण मनुष्य की तरह आचरण करने और भगवान को 'निरपख' भगवान के पद पर स्थापित करने की साधना की थी। इसीलिए वे वेद और कुरान से भी आगे बरे, होत झनकार नित बजत तूरा। वेद–कत्तेब की गम्म नाहीं–तहाँ रहै कबीर कोई रमै सूरा।। यह धर्म निरपेक्षता नहीं धर्म को ठीक से समझना है। बाह्याचारों, व्यर्थ का कुलाभिमानए अकारण ऊँच–नीच की प्रतिक्रियात्मक भावनाओं से समन्वय और समरसता की ओर गतिशील होना ही उचित है।

इन्द्रनाथ चैधरी के अनुसार फकबीर ने बाजार में खडे होकर हिंदू धर्म और मुस्लिम मजहब के तादाम्य की कोशिश नहीं की थी बल्कि इन दोनों सम्प्रदायों के बीच की संपूरक स्थिति का समझाने और उसके प्रसार की बात की थी। राम–रहीम की एकता की बात नहीं, अद्वैत ब्रहम और पैंगबरी खुदा को मिलाने की बात भी नहीं वरन् किस तरह यह दोनों एक दूसरे के पूरक हैं उसका उल्लेख किया और बिना किसी संकोच के दोनों सम्प्रदायों के बीच पफैले हुए कट्टरवाद का विरोध करते हुए इन दोनों धर्मों के उन तत्त्वों को उजागर करने का प्रयत्न किया, जिससे एक दूसरे को समझने में आसानी हो और विभिन्नता के बावजूद सौहार्द का प्रसाद हो सके। यह दृष्टिकोण उन्हें विभिन्न–दर्शनग्राही एकेश्वरवादी कबीर बनाता है।य् कबीर के अनुसार यह सारा व्यक्त जगत एक ही तत्त्व से उत्पन्न हुआ है। इसलिए मानव–मानव में किसी प्रकार का भेद देखना अज्ञान का द्योतक है। इसीलिए अपनी रचनाओं में कबीर ने जाति–पाँति, छुआ–छूत, ऊँच–नीच और ब्राह्मण–शूद्र के भेद का विरोध किया है। परन्तु इस विचारधारा के पीछे भी आध्यात्मिक सत्य ही है। कबीर का कहना है–

एकहि जोति सकल कपट व्यापक दूजा तत्त्व न होई। परमात्मा ने एक ही बूँद से सारी सृष्टि रची है, पिफर बाह्मण और शूद्र का भेद क्यों? एक ही नूर से सारा संसार रचा गया है ना कोई भला है न कोई मंद– फ्एक बूँद तैं सृष्टि रची है कौन ब्राहमण कौन सूदाय् फ्एक नूर तैं सब जग कीआ कौन भले को मंदोय् धर्म तथा आचार–व्यवहार से जुड़े बाह्याडम्बरों के प्रति कबीर की कोई आस्था नहीं थी। इन सभी को कबीर ने से जर्जर बना दिया था। इसीलिए अनुभूति समपन्न कवि और सन्त होते हुए भी कबीर सामाजिक उथल–पुथल से तटस्थ नहीं रह पाये। उस समय सामन्ती चेतना पूरे उभार पर थी धन–संपत्ति, सोना–चाँदी और कामिनी या सुंदरी इन सबके प्रति एक विशेष आकर्षण समाज में था। सामान्य और गरीब जनता अभावग्रस्त थी, परन्तु योग विलास में डूबे शासकों और सुविधा संपन्न वर्गों का इस ओर कोई ध्यान नहीं था।

2.2 कबीर की सामाजिक चेतना के आयाम

कबीर का जन्म ऐसे समय में हुआ जब समाज अनेक बुराइयों से ग्रस्त था। छुआछूत, अन्धविश्वास, रूगिड़ते रहते थे। धार्मिक पाखण्ड अपनी चरम सीमा पर था। धार्मिक कट्टरता और संकीर्णता के कारण समाज का सन्तुलन बिगड़ रहा था, कुरीतियों एवं कुप्रथाओं का बोलबाला था तथा सामाजिक विषमता ब 'साँच ही कहत और साँच ही गहत है, काँच कू त्याग कर साँच लागा। कहै कबीर यूँ भक्त निर्भय हुआ। जन्म और मरन का मर्म भागा।''1 कबीर की सामाजिक चेतना या समाज सुधारक व्यक्तित्त्व पर विचार करने से पूर्व यह जान लेना आवश्यक है कि क्या मध्यकालीन सामाजिक व्यवस्था से जुड़ी हुई समस्याओं को धार्मिक तथा राजनीतिक समस्या से बिल्कुल अलग करके देखा जा सकता है। एक क्षण के लिए मध्यकालीन या कबीर कालीन समाज को दरकिनार करके अपने आधुनिक समाज को देख लिया जाए तो बात कुछ अधिक सापफ में आ जायेगी। आज के समाज की अनेक समस्याओं में से सबसे बड़ी और प्रमुख समस्या है धार्मिक कट्टरपन। इसी धार्मिक कट्टरता या साम्प्रदायिकता के कारण एक आदमी दूसरे आदमी के खून का प्यासा बन जाता है, जिसके कारण समाज में व्यक्तियों का सह अस्तित्त्व ही खतरे में पड़ जाता है, जो सामाजिक संगठन की मूलभूत आवश्यकता है। जहाँ तक कबीर के समाज सुधारक होने का प्रश्न है, यह निर्विवाद सत्य है कि वे बु(, गाँधी, अम्बेडकर इत्यादि क्रांतिकारी समाज सुधारकों की परम्परा में शामिल होते हैं। एक महान समाज सुधारक की मूल पहचान यह है कि वह अपने युग की विसंगतियों की पहचान करें, एक मौलिक व समयानुकूल जीवन दृष्टि प्रस्तावित करें और इस जीवन दृष्टि को स्थापित करने के लिए हर प्रकार के भय और लालच से मुक्त होकर दृ सकते हैं कि वे जिस सामंतवादी युग में थे वह सामाजिक दृष्टि से अपकर्ष

का काल था। विलासिता जैसे मूल्य समाज में पफैले हुए थे। नारी को भोग की वस्तु माना जाता था। वर्णव्यवस्था और साम्प्रदायिकता ने मानव समाज को खंडित किया था। धर्म का आडम्बरकारी रूप वास्तविक धार्मिकता को निगल चुका था और भाषा से लेकर जीवन शैली तक एक प्रकार का आभिजात्य उच्च वर्गों की मानसिकता में बैठा हुआ था। ऐसे समय में कबीर ने मानव मात्रा की एकता का सवाल उठाया और स्पष्ट घोषणा की कि ''साई के सब जीव हैं, कीरी कुंजर दोय।'' वे समाज के प्रति अति संवेदनशीलता से भरे रहे क्योंकि 'सुखिया' संसार खाता और सोता रहा जबकि संसार की वास्तविकता समझकर 'दुखिया' कबीर जागते और रोते रहे। यह निम्नलिखित पंक्ति से स्पष्ट हो जाता है–

''सुखिया सब संसार है, खावै अरु सोवै।
दुखिया दास कबीर है, जागै अरु रोवै।''

यह संवेदनशीलता निष्क्रिय नहीं थी, बल्कि इतनी ज्यादा दृढ़ता और आत्मविश्वास से भरी थी कि बेहतर समाज के निर्माण के लिए कबीर अपना घर पफूँकने को पूर्णतः तैयार थे–

''हम घर जारा आपना, लिया मुराड़ा हाथ।
अब घर जारौं तासु का, जो चलै हमारे साथ।।''

कबीर के समाज के प्रति यही दृष्टिकोण वर्णव्यवस्था, साम्प्रदायिकता, भाषाई आभिजात्य और धार्मिक आडम्बरों के कठोर खंडन में सापफ दिखाई पड़ता है। उल्लेखनीय है कि भारतीय सामाजिक व्यवस्था को धार्मिक व्यवस्था से बहुत अलग करके नहीं देखा जा सकता है। जहाँ जाति–भेद, वर्ण–भेद धार्मिक व्यवस्था का ही परिणाम है, जहाँ पति–पत्नी का सम्बन्ध आध्यात्मिक बन्धन है, जहाँ व्यक्ति, परिवार और समाज के पारस्परिक सम्बन्धों का मूलाधार धर्म हैं, वहाँ सामाजिकता धार्मिकता से अलग कैसे हो सकती है। ब्राह्मण छुआछूत को इसलिए बढ़ावा देता है कि वह इसे अपना धर्म मानता है। यही नहीं एक बल्कि जानवरों का वध इसलिए करता है कि यह उसका धर्म ;ईश्वर द्वारा निर्धारित कार्यद्ध है।
शूद्रों को सभी वर्गों की सेवा इसलिए करनी चाहिए कि ईश्वर ने उसे इसी के लिए पृथ्वी पर भेजा है। जिस देश में गरीबी–अमीरी, सुख–दुख, जाति–पाति, ऊँच–नीच सभी कुछ ईश्वर की इच्छा से निर्धारित है उस देश में यदि किसी भी तरह का सामाजिक परिवर्तन लाना है तो उसके लिए धार्मिक परिवर्तन की दिशा में ही प्रयत्न करना होगा। आज के बौ(कि तथा वैज्ञानिक दृष्टिकोण से उपर्युक्त बातें आधारहीन भले ही हों किंतु मध्ययुगीन परिप्रेक्ष्य में ये शत–प्रतिशत सत्य हैं। कबीर जैसा ओजस्वी तथा विद्रोही रचनाकार जब इस तरह का भाव व्यक्त कर सकता है तो भ्रम की गुंजाइश कहाँ रह जाती है–

''पूरब जनम हम बाभन होते ओछे करम तप हीना।
रामदेव की सेवा चूका पकरि जुलाहा कीना।।''

इसलिए यह कहना कि कबीर का व्यक्तित्त्व मुख्यतः भक्त है। समाज सुधार उनके लिए गौण है। समीचीन नहीं है कि कबीर जिस तरह के भक्त हैं वह स्वयं में ही एक नवीन सामाजिक प(ति एवं मानवीय समता की स्वीकृति तथा पक्षधरता का प्रमाण है। यह भक्ति मार्ग ऐसा है। जहाँ ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र का अलगाव नहीं है, सभी एक हैं और केवल मनुष्य हैं। यदि इनकी कोइ उपाधि है, तो वह भी एक ही है, जो है संत या भक्त। इस साधना में ब्राह्मणों का वर्चस्व नहीं है।
ब्राह्मण के महत्त्व को अस्वीकार करना, सभी वर्गों के लिए एक नये आध्यात्मिक मार्ग की खोज करना, वेद, शास्त्रों में प्रतिपादित उन मान्यताओं को अस्वीकार करना, जो ब्राह्मणों के महत्त्व को स्वीकार करती ळे आदि युग–युग से निर्मित सामाजिक व्यवस्था पर गहरी चोट है–''शास्त्रा और सम्प्रदायों का निषेध करके कबीर केवल एक नयी भक्ति प(ति को ही नहीं जन्म दे रहे थे, बल्कि ढोल पीट–पीटकर जता रहे थे कि मुक्ति का मार्ग ब्राह्मण के घर से होकर नहीं जाता–जैसा कि युगों–युगों से प्रचारित किया जा रहा है। ब्राह्मण, वेद तथा वेद मार्ग के महत्त्व को अस्वीकार करके कबीर ने वस्तुतः सामंती व्यवस्था के मर्म पर आघात किया था। उनके भक्त रूप को महत्त्व देना, प्रकारांतर से उनके सामाजिक विद्रोह को हाशिये में डालना है।''
कबीर के समय तो यह दृष्टिकोण चल जाता था पर आज नहीं चल पाता। वर्तमान विश्व के अधिकांश लोग सैांतिक तौर पर चाहे मानें या नहीं, पर व्यवहारिक तौर पर समझ चुके हैं कि यह दुनिया ही वास्तविक और अंतिम दुनिया है, इसलिए इसे झूठा मानना और किसी काल्पनिक दुनिया के सपने देखना निरर्थक है। उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट है कि कबीर महान समाज सुधारक थे। जहाँ तक उनके नारी संबंधी या परलोक संबंधी विचार हैं, हमें उनसे प्रभावित नहीं होना चाहिए, क्योंकि वे सत्य धर्म के प्रतिपादक, समन्वयवादी एवं क्रांतिकारी व्यक्ति थे। वे समाज में प्रचलित सभी प्रकार की असमानता बाह्याडम्बर एवं सामाजिक कुरीतियों को दूर करके जनसाधारण को सरल–जीवन, सत्याचरण, पारस्परिक एकता, समता आदि की ओर उन्मुख करने का जो सराहनीय कार्य किया है, उसी के परिणामस्वरूप वे एक उच्चकोटि के 'समाज–सुधारक' कहलाते हैं।

3. निष्कर्ष

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर कहा जाता सकता है कि कबीर सिर से पैर तक मस्त मौला थे। स्वभाव से फक्कड़, आदत से अक्कड़, भक्त के सामने निरीह, भेषधारी के आगे प्रचण्ड, दिल के साफ, दिमाग के दुरूस्त, भीतर से कोमल, बाहर से कठोर, जन्म से अछूत, कर्म से वन्दनीय थे । कबीरदास ने सामाजिक विरोध को समाप्त करके आपसी सहयोग एवं प्रेमभाव और मानवतावादी विचारों की धारा को प्रवाहित किया है। इस सम्बंध में डॉ0 शिवदान सिंह चैहान ने लिखा है दृ
''यह कहकर कि साई के सब जीव है, कीरी कुंजर दोय' उन्होंने मानव मात्र की समानता का सिद्धान्त प्रचारित किया है । कबीर यह मान्यता थी कि व्यक्ति समाज की इकाई है । समाज की सप्राणता और सुगठिता व्यक्ति के गुणों और आचरण पर निर्भर करती है । समाज की समरूपता तभी सम्भव है जब जाति, वर्ण और वर्ग भेद न्यून हो । अतरू कबीर की साधना वैयक्तिक और आध्यात्मिक होते हुए भी समाष्टि परक है।''

4. सन्दर्भ

1. रॉय, विजय. अंग्रेजी में आधुनिक भारतीय कविता के सामाजिक, सांस्कृतिक और आध्यात्मिक आयाम।, 2017.
2. शंकर, सुचेता. काली की बेटियाँः दक्षिणी भारत में महिला भक्ति काव्य।, 2016.
3. अरोड़ा, सुधीर और चौहान, अबनीश। सृजन एवं आलोचना जुलाई–अक्टूबर 2021।
4. सुमति, यादव. भक्ति कवियों के शारीरिक प्रवचनों में पर्याप्त और ठोस भौतिकता। पेरीकोरिसिस।, 2020.
5. मर्फी, ऐनी। सूफी–भक्ति चौराहे परः प्रारंभिक आधुनिक पंजाबी साहित्य में लिंग और व्यंग्य की राजनीति। आर्किव ओरिएंटलनी. 2018;86:243-268.
6. वाधवानिया, मयूर. भारतीयता का अनावरणः भारतीय साहित्य

में कवियों की नज़र से हिंदू धर्म की खोज। विद्या – गुजरात विश्वविद्यालय का एक जर्नल।, 2023.
7. सिल, नरसिंह. शरतचंद्र की जाति और लिंग चेतनाः एक पुनर्मूल्यांकन। सेज खुला, 2015.
8. पीरन, सैयद और जहान, मशरीक। एसएल पीरन की कविता में अभिव्यक्ति की शैली डॉ. मशिर्के जहान द्वारा।, 2021.
9. राजोरिया, विनय. मुँह–बंद कलियाँः साहिर लुधियानवी की शायरी में महिलाओं की ख़ामोशी।, 2024.
10. जहाँ, मशरीक और पीरान, सैयद। एसएल पीरन की कविता में आध्यात्मिक चेतना।, 2021.
11. दास, श्यामसोंदर (सं.), कबीर ग्रंथावली। कानपोरः चंद्रलोक प्रकाशन, 2015.
12. मेधी, यशोधरा. शंकरदेव की लीलाएँ। दिल्लीः मोतीलाल बनारसीदास पब्लिशर्स प्राइवेट लिमिटेड।, 2017.
13. सुचेता चतुर्वेदी "कबीर और जॉर्ज हर्बर्ट की कविता पर एक तुलनात्मक परिप्रेक्ष्य" आदित्य अंगिरस "कबीर की कविता में नैतिकता का व्यंग्य" भाषाविज्ञान और साहित्य अध्ययन. 2019;7(2):64–70.
14. सूरज कुमार "री–क्वेरिंग द 'क्वीर': आर. राज राव की द बॉयफ्रेंड और ध्रुबो ज्योति की "ए लेटर टू माई लवर्स" में कामुकता, वर्ग और जाति के अंतर्विरोध", 2022
15. राजीव नायर एनवी "हिंदू धर्म के स्रोत के रूप में भारतीय साहित्य में प्रतीकवाद" खंड। 3. अंक. 3., 2016 (जुलाई–सितम्बर)
16. कड़ीवाल, एल. फासीवाद के खिलाफ नारीवादीः भारत में भारतीय महिला मुस्लिम विरोध। शिक्षा. विज्ञान. 2021, 11,
17. वर्षा वर्मा "कमला दास की कविताओं में नारीवादी परिप्रेक्ष्य की खोज" जेटिर जनवरी 2019, खंड 6, अंक 1
18. डॉ रचना प्रसाद "कमला दास की कविता में महिला पहचान की खोज" खंड 6, अंक 1 फरवरी 2018
19. सुनील सोंधी "वैश्विक परिवार में संचार" 2017,

Creative Commons (CC) License
This article is an open access article distributed under the terms and conditions of the Creative Commons Attribution (CC BY 4.0) license. This license permits unrestricted use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original author and source are credited.